इकाई 33 द्वितीय विश्व युद्ध : कारण, विस्तार तथा परिणाम

इकाई की रूपरेखा

33.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- द्वितीय विश्वयुद्ध के कारणों और उसकी शुरुआत के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे,
- युद्ध के दौरान घटी घटनाओं के बारे में जान सकेंगे,
- भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर इसके द्वारा पड़ने वाले प्रभावों की चर्चा कर सकेंगे, और
- अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसके प्रभाव को आंक सकेंगे।

33.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हमारा मुख्य ध्येय आपको द्वितीय विश्वयुद्ध से परिचित कराना है। 1919 की वर्साय संधि, जिसके द्वारा प्रथम विश्व युद्ध का अंत हुआ था, बड़ी यूरोपीय शक्तियों के बीच

विद्यमान तनावों को दूर नहीं कर सकी थी। द्वितीय विश्वयुद्ध यूरोपीय शक्तियों के बीच विद्यमान प्रतिद्वंद्विता तथा दो युद्धों के बीच के वर्षों के दौरान यूरोप में चलने वाले घटना चक्र का परिणाम था।

ब्रिटेन का एक उपनिवेश होने के नाते भारत को अपनी जनता की इच्छाओं के विरुद्ध इस युद्ध में शामिल होना पड़ा। इसके कारण भारतीय जनता को असंख्य कष्ट झेलने पड़े और साथ ही इसने भारत में साम्राज्यवाद विरोधी आंदोलन को भी प्रभावित किया। इस युद्ध के दौरान जान और माल की अभूतपूर्व क्षति की यादें आज भी लोगों को झकझोर देती हैं। इसके परिणाम विशेषकर उपनिवेशवाद के पतन की प्रक्रिया की दृष्टि से दूरगामी थे। युद्ध के दौरान विभिन्न उपनिवेशों में मुक्ति आंदोलन में तीव्रता आई थी और साम्राज्यवादी नियंत्रण कमज़ोर पड़ गया था।

33.2 कारण

मार्क्सवादी इतिहासकारों ने तर्क देते हुए कहा कि यदि मित्र राष्ट्रों ने प्रथम विश्व युद्ध के दौरान लेनिन की आम शांति कांफ्रेंस (जनरल पीस कांफ्रेंस) तथा उनके शांति सूत्र को स्वीकार कर लिया होता तो जर्मनी के विस्तारवाद की स्थिति उभरती ही नहीं। लेनिन के शांति सूत्र में हरजाने और सीमाओं के पुनर्गठन को शर्त के रूप में नहीं रखा गया था। आम तौर पर यह स्वीकार्य तथ्य है कि वर्साय संधि के आधार पर सीमाओं का पुनर्गठन और जर्मनी पर क्षतिपूर्ति वहन का भारी बोझ, द्वितीय विश्वयुद्ध का मुख्य कारण बना। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि अन्य राजनीतिक, वैचारिक और आर्थिक कारणों ने अपना प्रभाव नहीं छोड़ा। प्रथम विश्वयुद्ध के उपरांत की संधियों पर राजनीतिक प्रतिक्रिया को विश्वव्यापी आर्थिक मंदी के प्रभाव, फासीवाद का उदय तथा जर्मनी, इटली और जापान में सैन्यवाद के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। पश्चिमी प्रजातंत्रों की तुष्टीकरण नीति उनके सोवियत विरोधी दृष्टिकोण पर आधारित थी।

33.2.1 वर्साय संधि और सतत राजनीतिक अव्यवस्था

जर्मनी के साथ हुई वर्साय संधि (28 जून, 1919) सौदों और समझौतों का परिणाम थी जो शांति के लिए अस्थायी पैबंद साबित हुई। अंततः जर्मनी को आंतरिक क्षेत्रीय क्षति अपेक्षाकृत कम हुई। उसे अल्सास-लौरेन (Alsace-Lorraine) फ्रांस को, राइनलैंड मित्र राष्ट्रों को, छोटे सीमांती क्षेत्र बेल्जियम और डेनमार्क को तथा ब्रिटेन और फ्रांस को औपनिवेशिक अधिकार देने पड़े। जैसा कि 1920-30 के मध्य में जर्मनी की उल्लेखनीय वसूली से स्पष्ट हो जाता है, इस समझौते ने उसे आर्थिक रूप में अधिक नुकसान नहीं पहुँचाया। तथापि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जर्मन जनता "युद्ध अपराध" (वार गिल्ट) की धारा 231 के तहत क्षतिपूर्ति के लिए भुगतान किये गये। जर्मनी 1320 लाख स्वर्ण मार्क से उतनी नाराज़ नहीं थी जितनी कि क्षेत्रीय समझौते के कारण थी। यहां तक कि जर्मनी, लीग ऑफ़ नेशन्स को भी अन्यायपूर्ण क्षेत्रीय समझौते को लागू करने वाले एक साधन के रूप में देखता था।

वर्साय संधि के बाद की अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली का आधार आरंभिक दशकों की अपेक्षा अधिक कमज़ोर था। शांति समझौते में "नैतिक शक्ति" नहीं थी। जर्मनी का मानना था कि यह शांति समझौता विल्सन के चौदह सूत्रों में निरूपित बुनियादी विश्वासों का उल्लंघन था। फ्रांस ने इसे एक पराजय माना। मध्य एवं पूर्वी यूरोप में क्षेत्रीय समझौते भावी संघर्ष के मूल कारण बन गये थे। आस्ट्रिया और हंगरी के विघटन से एक शून्य उत्पन्न हो गया और राष्ट्रीय आत्म संकल्प की चाह ने संघर्ष के नये आयाम खोल दिये। रूस और अमरीका के हट जाने के बाद ब्रिटेन और फ्रांस विश्व शांति बनाये रखने के लिए अकेले बच गये। किन्तु उनके उपनिवेशों में जुझारू राष्ट्रीय मुक्ति संघर्षों के उठने के कारण ब्रिटेन और फ्रांस के पास न तो इतनी ताक़त थी और न ही इच्छाशक्ति कि वे शांति समझौते की रक्षा कर सकें। इसके अतिरिक्त साम्राज्यवादियों की पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता ने जर्मनी के प्रश्न को यथावत बनाए

रखा। 1914 से पहले के शक्ति संतुलन के पीछे जो नैतिक समर्थन था, वह कभी दुबारा हासिल नहीं किया जा सका, यहां तक कि लीग ऑफ़ नेशन्स को भी अंतर्राष्ट्रीय समर्थन प्राप्त नहीं हो सका। इसलिए अंतर्राष्ट्रीय संघर्षों का समाधान प्रस्तुत करने में असफल रही।

33.2.2 आर्थिक मंदी का प्रभाव

युद्ध के बाद यूरोप में जो आर्थिक सुधार हुआ वह अक्तूबर, 1929 में शेयरों के दामों में भारी गिरावट के कारण फिर से प्रभावित हुआ। 1932 तक यूरोप का औद्योगिक उत्पादन लगभग आधा रह गया और 1935 में व्यापार 58 बिलियन डालर (580 खरब डालर) से नीचे आ गया। विश्वव्यापी आर्थिक मंदी ने भयंकर बेरोज़गारी की समस्या पैदा कर दी। 1932 में बेरोज़गारों की संख्या जर्मनी में साठ लाख, ब्रिटेन में तीस लाख और अमरीका में तेरह लाख हो गयी थी।

संकटग्रस्त अंतर्राष्ट्रीय राजनीति आर्थिक मंदी से प्रभावित हुए बिना न रह सकी। राष्ट्रों के बीच अस्तित्व के लिए उठी तीव्र स्पर्धा ने राष्ट्रवादी भावनाओं को और मज़बूत किया। जर्मनी, इटली, जापान, स्पेन और रूमानिया की कमज़ोर राजनीतिक प्रणालियों के कारण वहां के उग्र दक्षिणपंथी "राष्ट्रवादी" फासीवादी नेतृत्व और विचारधाराओं को फासीवादी और सैन्यवादी शासन स्थापित करने का मौका मिला। जर्मनी के मामलों में फ्रांस की दख़लअंदाज़ी की कोशिश ने भी जर्मनी में राष्ट्रवादी भावनाओं को उभारा। जर्मनी द्वारा क्षतिपूर्ति के "हूवर ऋणस्थगन" (Hoover Moratorium) ने भी फ्रांस और अमरीका के बीच कटुता को बढ़ाया। मुद्राओं के स्पर्धात्मक अवमूल्यन और प्रतिस्पर्धात्मक राष्ट्रीय मुद्रा के उभरने ने राजनीतिक आर्थिक संकट को गहरा दिया। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि हिटलर ने एक आत्म निर्भर राइख (संसद) की स्थापना के अपने कार्यक्रम के लिए जनता की सहमति आसानी से हासिल कर ली।

33.2.3 जर्मनी में नात्सीवाद का उदय

1920 और 1930 के दशक यूरोप के लाखों लोगों के लिए राजनीतिक अस्थिरता, आर्थिक कठिनाइयाँ, बेरोज़गारी, विश्वास के टूटने और विक्टोरिया समाज के मूल्यों के विघटन के दशक थे। ऐसे लोग फासीवादी आंदोलन के विचारों और भ्रमों के प्रति आसानी से आकृष्ट हो गए। ऐसी ही परिस्थितियों में हिटलर लोगों को कष्टों से मुक्ति दिलाने वाले नेता के रूप में उभर कर सामने आए। 1932 तक, जैसा कि फ्रिट्ज स्टर्न का मत है, "वाइमर का पतन निश्चित हो चुका था। लेकिन हिटलर अब तक पूर्णतः सफल न हो सका था" फिर भी 1933 में घटी घटनाओं ने हिटलर को अंततः जर्मनी का चांसलर बना दिया।

1920 से 1928 के बीच गठबंधन की राजनीति के कारण जर्मनी में संसदीय प्रणाली जीवित रही। लेकिन 1929 की आर्थिक मंदी ने वाइमर सरकार, जो अब तक अनिश्चितता की स्थिति में लटकी हुई थी, उसके भाग्य का फैसला कर दिया। नात्सीवादी 1924 में जिनकी संख्या राइखस्टाग संसद में 32 थी, 1928 में घटकर 12 हो गयी थी, उन्होंने इस स्थिति का लाभ उठाया और 1933 में अभूतपूर्व चुनावी सफलता अर्जित की। नात्सी आंदोलन ने छोटे किसानो, मध्यम वर्गीय और पेटी बुर्जुआ वर्गों की शिकायतों को व्यापक चुनावी समर्थन के लिए सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया।

चित्र 24. हिटलर

चूँकि राष्ट्रवादियों का राजनीतिक पतन हो चुका था, जर्मन राष्ट्रपति हिन्डेनबर्ग ने अति दक्षिणपंथियों का समर्थन लेना आरंभ कर दिया। मई 1932 में राष्ट्रपति हिन्डेनबर्ग हिटलर विरोधी थे। लेकिन जनवरी 1933 में हिटलर को जर्मनी का चांसलर चुनने में उन्होंने कोई हिचकिचाहट नहीं दिखायी। इसके उपरांत नात्सी आंदोलन ने पीछे मुड़कर नहीं देखा।

राष्ट्रीय समाजवादी अथवा नात्सी दल कई छोटे जर्मन नस्लवादी और राष्ट्रीय गुटों में से एक था। जुलाई, 1921 के बाद से हिटलर ने इसका नेतृत्व संभाल लिया था। यद्यपि नवंबर, 1923 में हिटलर म्युनिख विद्रोह के दौरान सत्ता प्राप्त करने में असफल रहा लेकिन 1925 और 1928 के बीच उसने नात्सी आंदोलन को जीवित रखा और 30 जनवरी, 1933 को जर्मनी का चांसलर बन गया। हिटलर की सफलता उसकी इस क्षमता में निहित थी कि वह लोगों की मनोवैज्ञानिक चिंताओं का राजनीतिक इस्तेमाल कर सकता था। मज़बूत सरकार

और बेरोज़गारी समाप्ति के वादों तथा अपने लड़ाकू दस्तों के प्रयोग द्वारा अपने विरोधियों के दमन के बल पर हिटलर शक्ति के उत्कर्ष पर पहुँचा।

विचारधारात्मक स्तर पर नात्सी आंदोलन 1918 की पराजय के मोहभंग के बाद जर्मनी में फैली रूढ़िवादिता पर टिका हुआ था। यह रूढ़िवादिता कम्युनिस्ट विरोधी, सामी विरोधी, जनतंत्र विरोधी तथा उन्नीसवीं शताब्दी के नस्लवाद और अतिवादी दक्षिणपंथ पर आधारित थी। हिटलर का नात्सीवाद पराजित किन्तु उग्र सैन्यवाद और साम्राज्यवाद से जुड़ा हुआ था। अधिकांश इतिहासकारों का मत है कि नात्सीवाद के उदय के पीछे हिटलर की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही। किन्तु मार्क्सवादी इतिहासकारों के अनुसार नात्सी नेताओं का शक्तिवर्धन पूरे जर्मन समाज की सैन्यीकृत संरचना के कारण हुआ। यह मत काफ़ी तर्कसगत प्रतीत होता है। नात्सी विचारधारा जर्मन नस्ल की उत्कृष्टता और जर्मनों के लिए अधिक भूमि और अधिकाधिक क्षेत्र की मांग पर आधारित थी।

33.2.4 मुसोलिनी और इटली का फासीवाद

फासीवाद कोई आर्थिक प्रणाली नहीं थी। इसकी कोई स्पष्ट विचारधारा भी नहीं थी। समाजवादी भाषा ने इसकी सम-एकाधिकारी पूँजीवाद की नीति पर पर्दा डाले रखा। यह एक ऐसा प्रतिक्रियावाद था जिसे उचित ही दक्षिणपंथ के "उग्रवाद" की संज्ञा दी गयी थी।

इटली में फासीवाद प्रथम विश्वयुद्ध के बाद 1918-1922 के संकट की देन था जिनमें सामाजिक-आर्थिक अनिश्चितता, राष्ट्रवादी असंतोष तथा समाज को एकसूत्र में बांधने वाली उदारपंथी राजनीति की असफलता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। ऐसे सामाजिक आर्थिक माहौल और राजनीतिक शून्यता के दौर में फासीवाद को अपनी जड़ें जमाने का अवसर प्राप्त हुआ। इसके उदय के कारण आमतौर पर उदारवाद का पतन, दिशाविहीन जनता का उदय, "सर्वाधिकारवाद" अथवा "आधुनिकीकरण" और मज़दूरों को नियंत्रित करने के लिए स्थिर पूँजीवाद की आवश्यकता माने जाते रहे हैं। आर्थिक पतन, आक्रामक राष्ट्रवाद तथा मार्क्सवाद विरोध इसकी सफलता के स्रोत थे।

23 मार्च, 1919 को मुसोलिनी (1883-1945) ने जो एक पत्रकार, भूतपूर्व सैनिक और भूतपूर्व समाजवादी था, संघ के लिए संघर्ष नाम से एक नया आंदोलन शुरू किया। कम्युनिस्टों, समाजवादियों और अन्य विरोधियों का संहार करते हुए उन्होंने अपनी प्रभुता जमायी। मुसोलिनी 1922 में इटली का प्रधानमंत्री बना और 1925 में वह एक फासीवादी तानाशाह बन गया। 1926 में अपने आदेशों द्वारा वह सरकार का काम चलाता रहा तथा संविधान और चुनाव रद्द कर दिये गये। 1926 और 1939 के बीच इटली के फासीवाद ने "निगम राज्य" की स्थापना को अपना मुख्य लक्ष्य घोषित कर रखा था जिसे व्यवहार में कभी प्राप्त नहीं किया जा सका। यद्यपि इसके कारण श्रमिकों के शोषण और उत्पीड़न पर पर्दा पड़ा रहा। 1936 के बाद मुसोलिनी की आर्थिक आत्मनिर्भरता की नीति के भी कोई परिणाम सामने नहीं आये।

33.2.5 जापान में सैन्यवाद का उदय

इटली और जर्मनी की भांति ही जापान में भी युद्ध के बाद (1918-22) का संकट अपने साथ "चावल उपद्रव" तथा औद्योगिक अशांति लेकर आया। राजनीतिक रूप से बड़े उद्योगों और डाइट (संसद) के एकजूट होने से जापान में 1930 के दशक में सैन्य फासीवाद की नींव रख दी। 1912-1926 का तायशो (महान् न्यायप्रियता)" काल वास्तव में उदारवादी राज्य से तानाशाही राज्य की ओर संक्रमण का काल था।

1927 और 1930 के दौरान मामूली घरेलू मंदी तथा विश्व व्यापी आर्थिक संकट ने उद्योग एवं बैंकिंग दोनों को बुरी तरह प्रभावित किया। निर्यात में गिरावट ने, विशेष रूप से अमरीका को कच्चे सिल्क के निर्यात में गिरावट ने जापान के किसानों की आधी जनसंख्या को बुरी तरह प्रभावित किया। 1923 में धान की ख़राब फसल ने अकाल की स्थिति पैदा कर दी और ग्रामीण क्षेत्रों में अशांति फैल गयी। उदारवादी राजनीतिक नेतृत्व इस समस्या का

समाधान करने में असफल रहा। संकट की यह परिस्थिति छोटे सैनिक अफसरों के बीच अति दक्षिणपंथी विचारों को भरने के लिए काफ़ी उपयुक्त बन गयी। यह किटा इक्की द्वारा प्रस्तुत "शोवा पुनः स्थापन" की लोकप्रियता में व्यक्त हुआ जिसका अर्थ था सैनिक तानाशाही द्वारा राज्य समाजवाद की स्थापना।

1930 के दशक में उग्र राष्ट्रवादिता तथा प्रतिक्रियावादी रूढ़िवाद ने आर्थिक और राजनीतिक संकट के दौरान जापान में अपनी जड़े गहरी जमा लीं। उग्र राष्ट्रवादिता और सैन्यवाद, मंचूरिया में उनकी विजय तथा पूर्वी साम्राज्य की स्थापना की चाह ने जापान को दूसरे विश्व युद्ध की ओर ढकेल दिया।

33.2.6 ब्रिटेन और फ्रांस की तुष्टीकरण की नीति

1937 से जबकि हिटलर मध्य यूरोपीय क्षेत्रों पर कब्ज़ा करने में व्यस्त था, पश्चिमी जनतंत्र तुष्टीकरण की नीति के द्वारा शांति समझौते के लिए कार्यरत थे। तुष्टीकरण नीति के पीछे बुनियादी दर्शन यह था कि जिस व्यक्ति के पास कोई वस्तु या अधिकार हो और यदि उसे कुछ छोड़ने को कहा जाय तो अंततः अनिवार्य रूप में उसे कुछ न कुछ त्याग करना ही पड़ेगा। इस नीति के पीछे यह भी सोच थी कि जर्मनी की शिकायतें जायज़ हैं और उसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण रवैया अपनाना चाहिए। ब्रिटेन के प्रधानमंत्री चैम्बरलेन ने ऐंग्लो-जर्मन गठबंधन तैयार करने के उद्देश्य से 1937 से इस नीति का पालन आरंभ किया।

चैम्बरलेन की इस नीति के पीछे मुख्य कारण थे : जर्मनी, इटली और जापान की सम्मिलित शक्ति का भय फ्रांस की राजनीतिक और सैनिक अविश्वसनियता, सोवियत संघ के प्रति शंका, जर्मनी के साथ लम्बे समय तक युद्ध तथा बड़े पैमाने पर शस्त्रीकरण पर वित्तीय व्यय एवं उसके राजनीतिक परिणाम, अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति का ग़लत मूल्यांकन तथा अंततः ब्रिटेन के रक्षा पक्ष को मज़बूत करने के लिए और अधिक समय हासिल करना। सामाजिक और राजनीतिक दबाव, वित्तीय और सैनिक सीमाएं बहुत हद तक फ्रांसीसी नीति के निर्धारण में निर्णायक बने। इसी का परिणाम था कि 1938 में जर्मन आक्रमण के विरुद्ध रणनीति तैयार करने के उद्देश्य से सोवियत संघ द्वारा चार शक्तियों की कान्फ्रेंस के आह्वान के अवसर को इन्होंने खो दिया। जापान के चीन पर आक्रमण, इटली के अबीसीनिया पर आक्रमण तथा जर्मनी द्वारा प्राग पर कब्ज़ा किये जाने के दौरान भी इन राष्ट्रों ने हस्तक्षेप नहीं किया। केवल 1940 में हिटलर द्वारा फ्रांस पर हमला किये जाने पर ही तुष्टीकरण नीति को गहरी चोट लगी।

33.3 युद्ध की शुरुआत के कारण

युद्ध के तात्कालिक कारण उस काल के अंतर्राष्ट्रीय घटना चक्र में देखे जा सकते हैं। फासीवादी शक्तियों द्वारा उत्पन्न युद्ध के ख़तरे को ब्रिटेन और फ्रांस के निर्णयात्मक और संयुक्त हस्तक्षेप द्वारा टाला जा सकता था। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको स्पष्ट हो जाएगा कि हिटलर के उदय, फासीवादी आंदोलन के विकास तथा यूरोप में आक्रमण सैनिक कार्रवाइयों में अवश्यंभाविता जैसी कोई बात नहीं थी। 1920 और 1930 के दशकों का आर्थिक और राजनीतिक संकट फासीवाद के उत्थान तथा आक्रामक युद्धों में परिवर्तित नहीं होता, यदि उदारवादी राजनीतिक शक्तियां इस संकट से निपटने की दिशा में अपनी शक्ति लगा देतीं।

33.3.1 जापान और पूर्वी एशिया में संकट की स्थिति

1928-37 के दौरान पूर्वी एशिया में बढ़ते हुए संघर्ष का प्रतिफलन जुलाई, 1937 में चीन-जापान युद्ध के रूप में हुआ। इसे विश्व युद्ध की दिशा में अग्रसर होने की शुरुआत माना जाता है। पश्चिमी शक्तियों ने लीग आफ़ नेशन्स के ज़रिए जापान पर रोक लगानी

...ही लेकिन वे असफल रहे। आर्थिक मंदी के बाद अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए जापान को पूंजी एवं कच्चे माल-कोयला, कपास, लोह अयस्क तथा तेल बाहर से प्राप्त करने की आवश्यकता थी। विशेषकर कच्चे माल की प्राप्ति के लिए मंचूरिया पर नियंत्रण उसके लिए काफी कठिन हो गया। उल्लेखनीय है कि 1929 तक जापान का विदेशों में कुल पूंजी निवेश का चौथाई पंचमांश (4/5 भाग) चीन में था। चीन भी अपने लिए एक एशियाई साम्राज्य स्थापित करने का साम्राज्यवादी सपना देख रहा था।

1930 के दशक में उभरे उग्र राष्ट्रवाद और सैन्यवाद की अभिव्यक्ति विदेशों में साम्राज्यवाद के रूप में होना निश्चित थी। इसकी झलक सितम्बर, 1931 में जापानी सेना द्वारा मंचूरिया पर कब्ज़ा करने में दिखायी देती है। वास्तव में फ़रवरी, 1932 में सेना ने मांचूकुओ नामक कठपुतली सरकार की स्थापना की जिसे लीग ऑफ़ नेशन्स ने मान्यता देने से इंकार कर दिया। इसके उपरांत 1933 में जापान "लीग" से हट गया और विस्तारवाद की ओर बढ़ता गया। जापानी सरकार न तो आरंभ में और न ही बाद में सैन्यवाद पर कोई रोक लगा सकी— असैनिक सरकार पर सैनिक प्रभुता बराबर बनी रही जिसके कारण जुलाई 1937 में चीन के विरुद्ध पूर्ण रूप से युद्ध घोषित कर दिया गया। युद्ध का ज्वार चीन और जापान के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों की ओर भी बढ़ने लगा।

33.3.2 इटली द्वारा अबीसीनिया/इथोपिया (1935-36) पर आक्रमण

इटली, अफ्रीका में औपनिवेशिक साम्राज्य का गठन न तो अफ्रीका के लिए उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुए संघर्ष के दौर में कर पाया और न ही प्रथम विश्व युद्ध के बाद पेरिस शांति कान्फ्रेंस से ही उसे इस दिशा में कोई सफलता मिली। स्वाधीन इथोपिया जिसने 1896 में इटली को पराजित किया था 1935-36 में मुसोलिनी का लक्ष्य बन गया जो औपनिवेशिक साम्राज्य के गठन की दिशा में पहला कदम था।

जनवरी, 1935 में, मुसोलिनी फ्रांस को, जो कि हिटलर के विरुद्ध इटली से समर्थन पाने का इच्छुक था, तटस्थ करने में कामयाब हुआ। लेकिन जन सहानुभूति के दबाव में आकर ब्रिटेन को इथोपिया का समर्थन करना पड़ा। तब भी इटली ने 3 अक्तूबर, 1935 को इथोपिया पर आक्रमण कर दिया। लीग ऑफ़ नेशन्स ने तत्काल ही इटली को आक्रामक घोषित करते हुए उस पर आर्थिक प्रतिबंध लगा दिये। लेकिन ब्रिटेन और फ्रांस की तुष्टीकरण की नीति के कारण प्रतिबंध प्रभावहीन रहे। इटली को संतुष्ट रखने के लिए ब्रिटेन और फ्रांस ने इथोपिया को विभाजित करने का भी प्रस्ताव रखा लेकिन जनविरोध को देखते हुए उन्हें प्रस्ताव वापस लेना पड़ा।

लेकिन 1936 में इटली की सेना ने हवाई हमलों में विषैली गैस का प्रयोग करके तथा हज़ारों निस्सहाय इथोपियाई जनजातियों का संहार करके इथोपिया के वीरतापूर्ण प्रतिरोध को ख़त्म कर दिया। 5 मई को इटली की सेना इथोपिया की राजधानी आदिस अबाबा में प्रवेश कर गयी।

इस युद्ध ने यथार्थ में लीग ऑफ़ नेशन्स को चोट पहुँचायी तथा मुसोलिनी को हिटलर के साथ ला खड़ा किया। परिणामस्वरूप रोम-बर्लिन गठबंधन अस्तित्व में आया जिसने अंतर्राष्ट्रीय शांति को भारी नुकसान पहुंचाया।

33.3.3 स्पेन का गृह युद्ध (1936-39)

1900 के बाद से स्पेन को प्रभावित करने वाले जन असंतोष की तीन मुख्य धाराएं थीं। मज़दूर वर्ग का क्रांतिकारी आंदोलन, क्षेत्रीय स्वायत्तता की मांग तथा पादरीवाद (याजकवाद) का विरोध। सितम्बर, 1923 से लेकर जनवरी, 1930 तक न तो प्राइमो द रिवेरा की सैनिक तानाशाही और न ही 1931 के बाद के निर्वाचित रिपब्लिकन जनता की इन शिकायतों को दूर कर पाए। यद्यपि 1936 के चुनावों के बाद वाम तथा वाम मध्यमार्गी दल सत्ता में आए लेकिन उग्र वामपंथी दल परिवर्तन से संतुष्ट नहीं हुए और सीधी कार्यवाही का रास्ता अपनाया जिसमें भूमि अभिग्रहण तथा जन क्रांतिकारी उमंग से ओत-प्रोत क्रांतिकारी हड़तालें शामिल थीं। क्रांति के विरुद्ध क्रांति विरोधी शक्तियों के प्रवेश के साथ ही 17 जुलाई, 1936 को गृह युद्ध आरंभ हो गया।

स्पेन का गृह युद्ध जो तीन वर्षों तक चला, क्रांतिकारियों एवं प्रतिक्रियावादियों के बीच अन्दरूनी संघर्ष तथा अंतर्राष्ट्रीय झगड़े जो फासीवादियों और जनतांत्रिक सरकारों के बीच थे, दोनों ही स्तर पर लड़ा जाता रहा। एक महत्वपूर्ण बिन्दू पर पहुंच कर यह साम्यवाद, फासीवाद और उदारवाद के बीच विचारधारात्मक संघर्ष बन गया। वास्तव में स्पेन का यह घटनाचक्र विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि बन गया।

दिसम्बर, 1938 को हिटलर और मुसोलिनी की सहायता से जनरल फ्रैंको ने फासिस्ट सरकार की स्थापना कर दी जिसे पश्चिमी जनतांत्रिक सरकारों ने मान्यता दे दी। इसके साथ ही पश्चिमी जनतांत्रिक सरकारों के साथ सुरक्षा के सोवियत प्रयासों का भी अंत हो गया क्योंकि यह फासीवादी शक्तियों को रोकने में काफी कमजोर और संशयपूर्ण साबित हुए।

33.3.4 विश्व युद्ध की ओर अग्रसर जर्मनी

1933-39 के दौरान हिटलर ने जर्मनी के तमाम जनतांत्रिक मूल्य नष्ट कर दिये और पूरे यूरोप के नात्सीकृत करने की प्रक्रिया आरंभ कर दी। 1939 में युद्ध की ओर ले जाने वाली घटनाएं काफी तेजी से घटीं। इस प्रक्रिया का निर्णयात्मक बिन्दु मुसोलिनी के इथोपिया पर आक्रमण में हिटलर का समर्थन था। स्पेन के गृह युद्ध ने इस मैत्री को सुदृढ़ किया। इस काल में हिटलर ने जर्मनी के पुनर्शस्त्रीकरण और राइन प्रदेश में सैन्यीकरण का कार्य पूरा कर लिया था। फ्रांस और ब्रिटेन की हस्तक्षेप न करने की नीति का लाभ उठाते हुए हिटलर ने 1938 में आस्ट्रिया के साथ एकता (ऐंश्लस) कायम की। इसके उपरांत चेकोस्लोवाकिया का विभाजन हुआ तथा मार्च, 1939 तक उस पर पूर्णतः कब्ज़ा कर लिया गया। हिटलर को इस लक्ष्य की प्राप्ति में ब्रिटेन का मौन समर्थन प्राप्त हुआ।

हांलाकि उल्लेखनीय बात यह थी कि जर्मनी का विस्तार स्लाव क्षेत्रों तक था। "पौलेंड का गलियारा" एक ऐसा मुद्दा था जिस पर हिटलर ने जर्मनी की उग्र राष्ट्रवादी भावनाओं को भड़काया। इसी समय सोवियत संघ परिदृश्य पर उभरा। फासीवादी आक्रमणों का विरोध करने के लिए अपने लोकप्रिय मोर्चे के प्रस्ताव पर पश्चिमी जनतंत्रों की अपर्याप्त प्रतिक्रिया से स्टालिन का मोहभंग हुआ और उसने जर्मनी के साथ 1939 में एक दूसरे पर आक्रमण न करने का समझौता कर लिया। इतना ही नहीं स्टालिन ने पौलैंड का विभाजन भी स्वीकार कर लिया। 1 सितम्बर, 1939 को पोलैंड का पर जर्मनी के आक्रमण के साथ ही विश्व युद्ध आरंभ हो चुका था। दो दिन बाद ब्रिटेन एवं फ्रांस ने पोलैंड के बचाव के लिए युद्ध में प्रवेश किया। जर्मनी का अति राष्ट्रवाद एक बार फिर विश्व युद्ध का प्रधान कारण बना।

बोध प्रश्न 1

1 वर्साय संधि का जर्मनी पर क्या प्रभाव पड़ा? दस पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2 इस काल के दौरान पूर्वी एशिया में मुख्य संकट क्या था? लगभग सौ शब्दों में लिखिए।

....
....

....

....

....

....

....

....

....

....

3 निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़िये और सही (√) अथवा गलत (×) का निशान लगाइये।

i) विश्वव्यापी आर्थिक मंदी के कारण राष्ट्रों के बीच अस्तित्व के लिए बड़े पैमाने पर संघर्ष छिड़ गया। ☐

ii) वैचारिक स्तर पर नात्सी आंदोलन साम्यवाद विरोधी और जनतंत्र विरोधी आधार पर खड़ा था। ☐

iii) मुसोलिनी के नेतृत्व के कारण इटली में फासीवाद सफल हुआ। ☐

iv) स्पेन का गृह युद्ध साम्यवाद, फासीवाद और उदारवाद के बीच विचारधाराओं का संघर्ष बन गया। ☐

33.4 द्वितीय विश्व युद्ध

विश्वयुद्ध की पूरी प्रक्रिया को मोटे तौर पर चार चरणों में बांटा जा सकता है। आरंभिक चरण फासीवादी शक्तियों के ताबड़तोड़ हमलों का था। इसके बाद युद्ध में तेजी आने तथा उसके विश्वव्यापी हो जाने का चरण आता है जिसमें जापान, अमरीका और सोवियत संघ का युद्ध में शामिल होना इसे विश्वव्यापी दीर्घकालिक युद्ध बना देता है। जब एक बार सोवियत संघ ने "देशभक्तिपूर्ण युद्ध" की घोषणा की तथा अधिग्रहित क्षेत्रों में जनप्रतिरोध आंदोलन लोकप्रिय हुए तो फासीवाद शक्तियों ने रक्षात्मक रवैया अपनाया। इसके साथ ही युद्ध का सारा नक्शा बदल गया और अंततः उसका परिणाम इटली, जर्मनी तथा जापान की विनाशकारी पराजय में निकला।

33.4.1 आरंभिक स्थिति : जर्मनी की विजय

1939-41 के दौरान जर्मनी ने तेजी से हमला (ब्लिट्ज़क्रिएग) करने की रणनीति पर चलते हुए युद्ध में विजय हासिल की। इसके लिए उन्होंने टैंकों का इस्तेमाल किया। सितम्बर,1939 में पोलैंड पर कब्ज़ा कर लिया। पोलैंड के पूर्वी प्रांत, रूसी फौज़ के अधिकार में थे और शेष पोलैंड पर जर्मनी का नियंत्रण था। हिटलर की तमाम आरंभिक युद्धों में तेजी से हमले की रणनीति काफी प्रभावशाली सिद्ध हुई।

फ्यूहरर (हिटलर) का अगला लक्ष्य नार्वे, जहां महत्वपूर्ण पनडुब्बी अड्डा बन सकता था और डेनमार्क थे। अप्रैल, 1940 में जर्मन सेना ने डेनमार्क से होते हुए नार्वे पर आकस्मिक आक्रमण कर दिया। मई में फ्रांस के लिए भी खतरा पैदा हो गया। केवल स्वीडन ही अकेला देश बचा था कि तटस्थ का। जर्मनी ने 10 मई को नेदरलैंड और कुछ ही दिनों बाद बेल्ज़ियम पर भी कब्जा कर लिया।

अप्रत्याशित रूप से ब्रिटेन और फ्रांस की प्रतिक्रिया प्रभावहीन और निरुत्साही सिद्ध हुई। उनके सेनानायक तेजी से हमले की रणनीति के महत्व को समझ नहीं पाये। फलतः उन्हें इसकी काफी बड़ी कीमत चुकानी पड़ी।

12 मई को जर्मन सेना सेदान (Sedan) से फ्रांस में प्रवेश कर गयी। एक सप्ताह के भीतर

नात्सी सेना फ्रांस के अंदर तक धंसती चली गयी। छद्म युद्ध (फोनी वार) फ्रांस में फैल गया। 25 मई को बेल्जियम ने आत्मसमर्पण कर दिया। मध्य जून तक मुसोलिनी ने भी फ्रांस के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया और पेरिस बिल्कुल अरक्षित रह गया। 17 जून को फ्रांस ने युद्ध विराम की अपील की। अप्रैल-मई, 1914 के दौरान युगोस्लाविया और यूनान पर विजय प्राप्त करने के बाद हिटलर ने रूस का रुख किया।

Regd. No. B. 3909

All The News

THE BOMBAY SENTINEL

Edited By B. G. Horniman

VOL. VIII NO. 204 — BOMBAY: TUESDAY, AUGUST 27, 1940 — PRICE: ONE ANNA

Hitler Launches Biggest Air Attack On Britain

Whole-Night Raid On 500 Mile Coast Line Front Extended Across Country From North To South

LONDON SURROUNDED BY WALL OF LIGHT DURING LONGEST AIR RAID CITY EVER EXPERIENCED

LONDON, August 27.

HITLER UNLEASHED HIS BIGGEST AIR ATTACK ON BRITAIN FROM NIGHTFALL YESTERDAY UNTIL DAWN TO-DAY. IN THESE BRITAIN'S MOST EXTENSIVE NIGHT RAIDS SINCE THE WAR, A COASTLINE OF OVER 500 MILES WAS ATTACKED AND ENEMY PLANES WERE REPORTED OVER AREAS EXTENDING FROM NORTH-EAST THROUGH THE MIDLANDS AND HOME COUNTIES DOWN TO THE SOUTH-WEST.

NAZIS EXPERIENCE STIFF RESISTANCE

PATIENTS TAKEN TO TRENCHES

TWILIGHT TWITTERS

EGYPTIAN PREMIER RESIGNS

Axis Powers' "Programme" In U. S.

GENERAL STAFF RESPONSIBLE FOR FRENCH DISASTERS

ANOTHER AIR RAID ALARM IN BERLIN

Rumania Prepared For Every Sacrifice

JAWAHAR ON CONGRESS PLANS Page 3

DRIVER KILLED IN GOODS TRAIN ACCIDENT

"EGYPTIAN AND BRITISH INTERESTS IDENTICAL"

British Ambassador's Vigorous Reply To Axis Allegations

R.A.F. Raids On Somaliland & Abyssinia

Telegraph Traffic To Somaliland Suspended

चित्र 25. द्वितीय विश्व युद्ध के विषय में अखबार में छपी रिपोर्ट

33.4.2 ठहराव की स्थिति : सोवियत रूस और अमरीका का युद्ध में प्रवेश

स्टालिन की हिटलर के प्रति तुष्टीकरण की नीति व्यर्थ रही। 22 जून, 1941 को हिटलर ने सोवियत संघ पर आक्रमण कर दिया इस प्रकार दो मोर्चों पर युद्ध का महत्वपूर्ण चरण आरंभ हुआ। लगभग दो हजार मील के क्षेत्र में 150 सशस्त्र विभाग, क्रियाशील हो गये। सितम्बर तक फासीवादी बिना किसी कठिनाई के आगे बढ़ते गये और लेनिनग्राद की घेराबंदी कर ली जो कि तीस महीने तक चली। अक्टूबर तक यूक्रेन पर पूरी तरह कब्ज़ा हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि सोवियत संघ ने "समय प्राप्त करने के लिए क्षेत्र में बढ़ते जाने की पद्धति अपनायी थी। अक्टूबर और नवम्बर में रूस की शीतऋतु ने हिटलर को आक्रमण गति धीमी करने पर मजबूर कर दिया। 2 दिसम्बर को रूस ने मास्को की रक्षा करने में सफलता अर्जित की। अब सोवियत संघ के आक्रमक रुख अपनाने की बारी थी। 1812 में नैपोलियन ने जो गलती की उसे हिटलर ने दुहराया जिससे उसके सारे सपने चूर-चूर हो गये।

पर्ल हारबर पर जापान के हमले ने 7 दिसम्बर, 1941 को अमरीका को युद्ध में खींच लिया था और इस प्रकार यह युद्ध विश्व युद्ध में पूर्णतः परिणित हो गया था। अप्रैल, 1942 तक जापान ने पूरे दक्षिण पूर्व एशिया गुआम और वेक द्वीप तथा सिंगापुर, फिलीपीन, बर्मा, और नीदरलैंड, ईस्ट इंडीज़ आदि को अपनी चपेट में ले लिया। हालांकि अमरीका ने जर्मनी को पराजित करना अपना मुख्य ध्येय बना रखा था। उसने मई, 1942 तक प्रशांत में जापानी

विस्तार को सफलतापूर्वक रोके रखा। 1942-43 में सोवियत संघ ने निर्णायक विजयें प्राप्त कीं लेकिन उसे भारी क्षति भी उठानी पड़ी। इसी बीच ब्रिटिश और अमरीकी सेनाएं केवल समुद्री तथा हवाई हमलों में लगी हुई थीं।

33.4.3 रक्षात्मक स्थिति : धुरी राष्ट्रों की पराजय

अधिकृत क्षेत्रों में नात्सी शासकों ने अपनी नस्लवादी नयी व्यवस्था बर्बरतापूर्ण दमन और नरसंहार के रूप में थोपी। जर्मनी के युद्ध अभियान को बरकरार रखने के लिए लोगों पर ज़ोर ज़बर्दस्ती की गयी। इसके फलस्वरूप स्वस्फूर्त भूमिगत प्रतिरोध संगठन हर जगह उभर आये। इन आंदोलनों को संगठित करने में मार्शल टीटो और चार्ल्स दे गॉल प्रमुख व्यक्ति थे। जर्मनी में भी लोकप्रिय हिटलर विरोधी आंदोलनों ने सिर उठाना शुरू कर दिया।

युद्ध के मोर्चे पर 1942 तक धुरी सेनाओं को रक्षात्मक रवैया अपनाने पर मजबूर होना पड़ा स्टालिनग्राद के लिए युद्ध में सोवियत लाल सेना (रेड आर्मी) ने 2,50,000 नात्सी टुकड़ियों को रोक लिया और 2 फ़रवरी, 1943 को जब इन टुकड़ियों ने आत्मसमर्पण किया तो केवल 80,000 सैनिक जीवित बचे थे।

अन्य क्षेत्रों में ब्रिटेन मिस्र की ओर बढ़ा और अमरीका, फ्रेंच उत्तरी अफ्रीका में जा पहुंचा और इस प्रकार मित्र राष्ट्रों ने धुरी राष्ट्रों की घेराबंदी आरंभ कर दी।

इसके बाद से भाग्य ने पलटा खाया। फासीवादी ताकतों का आत्मसमर्पण अब कुछ ही देर की बात रह गयी थी। 24 जनवरी, 1943 मित्र राष्ट्रों की सेना ने त्रिपोली तथा 13 मई को तुनीसिया की घेराबंदी कर ली। सिसिली जुलाई में कब्ज़े में आया और इसी के बाद इटली में मुसोलिनी का पतन भी हो गया। परिणामस्वरूप मित्र राष्ट्रों का इटली के कुछ क्षेत्रों पर कब्ज़ा हो गया। पूर्वी मोर्चे पर 1943 में सोवियत संघ की लाल सेना ने यूक्रेन के मुख्य क्षेत्र मुक्त करा लिये। इसके बाद लाल सेना यूरोप में आगे बढ़ने लगी।

33.4.4 धुरी राष्ट्रों का पीछे हटना और उनकी पराजय

1942-45 के दौरान धुरी राष्ट्रों की पराजय में जन प्रतिरोध आंदोलनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। आंतरिक तोड़फोड़ की गतिविधियां आम हो गयीं। सोवियत संघ और युगोस्लाविया में कई स्थानों पर पूर्णरूपेण गुरिल्ला युद्ध आरंभ हो गया। अधिकृत देशों में प्रतिरोधात्मक कार्यों ने दरअसल मित्र राष्ट्रों की सेना की योजनाओं को बल प्रदान किया।

इसी बीच 4-6 जून के दौरान मित्र राष्ट्रों की सेनाएं रोम को मुक्त करती हुई नार्मंडे जा पहुंचीं। हालांकि पूरे इटली को मुक्त कराने में लगभग एक वर्ष का समय लगा। सितम्बर, 1944 तक पेरिस समेत फ्रांस के मुख्य क्षेत्र मुक्त हो गये तथा मार्च, 1945 तक पूरा फ्रांस स्वतंत्र हो गया। बेल्जियम भी शीघ्र ही मुक्त हो गया। सोवियत मोर्चे पर लाल सेना पोलैंड और बाल्टिक राज्यों में धंसती चली गयी और सितम्बर, 1944 को बुलगारिया पर कब्ज़ा कर लिया जबकि अगस्त, 1944 में रूमानिया और फिनलैंड ने शांति का प्रस्ताव रख दिया।

एशिया में 1945 तक मित्र राष्ट्र सेना ने सैपान, तिनिआन, गुआम, फिलीपीन और बर्मा पर कब्ज़ा कर लिया। जून, 1945 में ओकिनावा द्वीप को अधिकार में लेते हुए उन्होंने जापान को चुनौती दी।

यूरोप में 1945 के आरंभ से मित्र सेना ने पूर्व और पश्चिम की ओर से जर्मनी की घेराबंदी आरंभ कर दी। 22 अप्रैल तक सोवियत संघ ने बर्लिन को अपने अधीन कर लिया। 28 अप्रैल को मुसोलिनी मारा गया, उसके ठीक अगले दिन उसके सेना ने आत्मसमर्पण कर दिया। 30 अप्रैल को हिटलर ने आत्महत्या कर ली तथा 7 मई, 1945 को जर्मनी ने बिना शर्त के आत्मसमर्पण कर दिया।

(क) रूसी सैनिक अपनी सीमाओं को पुर्नस्थापित करते हुए 1944
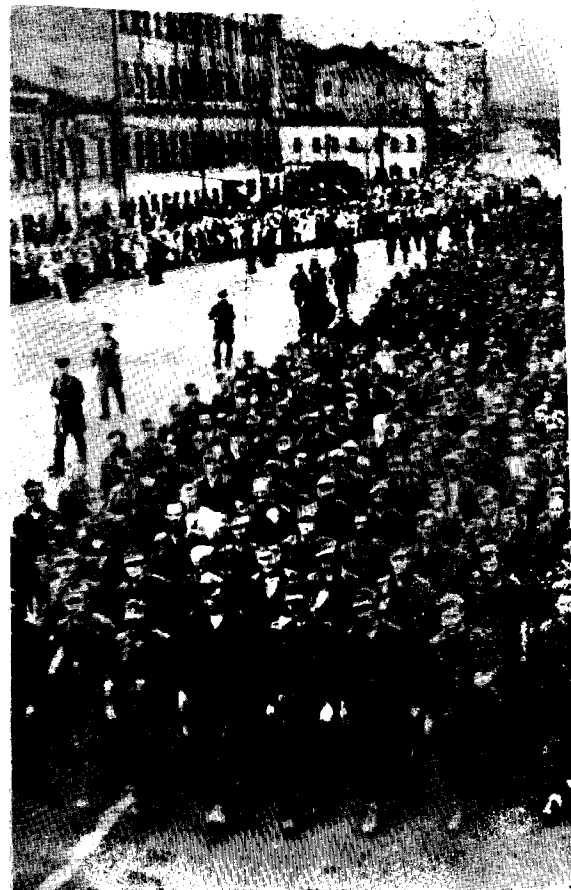
(ख) मास्को में नाज़ी युद्ध बन्दी–1944

(ग) मास्कोवासी वापस आये सैनिकों का स्वागत करते हुए

(घ) मास्को के रेड स्कवायर में विजय परेड (24 जून, 1945) नाज़ी झन्डों को फेंकते हुए

चित्र 26.

33.5 द्वितीय विश्व युद्ध के परिणाम

आरंभिक युद्धों से भिन्न दूसरे विश्व युद्ध ने मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित किया। युद्ध में वैज्ञानिक और तकनीकी प्रयोग तथा उनके विध्वंसकारी परिणाम भीषण थे। विशेष रूप से युद्ध में आणविक अस्त्रों के प्रयोग ने धरती पर मानव अस्तित्व के लिए एक नया ख़तरा उत्पन्न कर दिया।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में शांति (देतांत) की पुरानी धारणा समाप्त हो गयी। उपनिवेशवाद का स्थान विश्व साम्राज्यवादी शोषण के नवउपनिवेशवाद ने ले लिया। उपनिवेशवाद के बिखरने के कारण कई स्वाधीन राष्ट्र अस्तित्व में आये, जिन्हें आज ''तीसरी दुनिया'' कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के जन्म से शांति की आशा जागी लेकिन ''शीत युद्ध'' ने नये तनाव उत्पन्न कर दिये।

33.5.1 भारतीय राजनीति पर प्रभाव

1938-39 के फासीवादी आक्रमण के प्रति भारत में राजनीतिक प्रतिक्रिया बहुत तीक्ष्ण थी। ब्रिटेन विरोधी कांग्रेसी राष्ट्रवाद और साम्राज्यवादी विरोधी तथा फासीवादी विरोधी वाम अंतर्राष्ट्रीयतावाद दोनों ही फासीवादी आक्रमण तथा चैम्बरलेन की तुष्टीकरण की नीति की भर्त्सना करने में अग्रणी रहे। 3 सितम्बर, 1939 को भारत की इच्छा के विरुद्ध ब्रिटेन ने उसे युद्ध में शामिल कर लिया। लेकिन राष्ट्रवादियों ने युद्ध में सहयोग के लिए यह शर्त रखी कि ब्रिटेन तुरंत उन्हें केन्द्र में पूर्ण उत्तरदायी सरकार बनाने दे और युद्ध के बाद स्वाधीन भारत के लिए संविधान सभा की माँग स्वीकार करे। ब्रिटेन ने नकारात्मक प्रतिक्रिया दर्शायी। बाद में गांधी जी के नेतृत्व में राष्ट्रवादियों ने निष्क्रिय सविनय अवज्ञा के साथ प्रतिक्रिया ज़ाहिर की लेकिन कांग्रेस के वाम पक्ष ने कम्युनिस्टों के साथ मिलकर एक जुझारू युद्ध विरोधी संघर्ष के लिए प्रचार किया।

रूस पर जर्मनी के आक्रमण तथा जापान द्वारा दक्षिण-पूर्व एशिया के अभिग्रहण से भारतीय परिस्थिति में नाटकीय परिवर्तन हुआ। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी गहन वाद-विवाद के बाद जनवरी, 1942 में फासिस्ट विरोधी जन युद्ध (Anti-Fascist People's War) तथा मित्र राष्ट्रों के युद्ध प्रयासों के समर्थन में खुले आम सामने आयी। अगस्त, 1942 में गांधी जी ने ''करो या मरो'' के रूप में जुझारू प्रतिक्रिया ज़ाहिर की। इस प्रकार ''भारत छोड़ो'' आंदोलन पूरे भारत में फैल गया। लेकिन 1942 के अंत तक ब्रिटिश नौकरशाही ने आंदोलन को कुचल दिया। देशव्यापी जन आक्रोश के विरुद्ध कम्युनिस्ट साहसपूर्ण तरीके से फासीवाद के विरुद्ध कार्य करते रहे। परिणामतः भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में एक स्पष्ट विचारधारात्मक दरार पड़ गयी।

भारत में युद्ध के भयावह आर्थिक परिणाम थे—मुद्रा स्फीति, बाज़ार में वस्तुओं की कमी, काला बाज़ारी और भ्रष्टाचार तथा 1943 का अकाल जिसमें बंगाल में लगभग 30 लाख लोग मारे गये। साम्प्रदायिकता के बढ़ने से पाकिस्तान के लिये मुस्लिम लीग की मांग तथा औपनिवेशिक शासकों के साथ समझौते के लिये कांग्रेस के प्रयास भारत में युद्ध के बाद के राजनीतिक माहौल की ओर इशारा करते हैं।

यद्यपि किसानों और मज़दूरों द्वारा साम्राज्यवाद विरोधी, ज़मींदार विरोधी, और पूंजीवाद विरोधी जुझारू संघर्ष तथा 1945-46 के नाविक विद्रोह ने (रॉयल इंडियन नेवी R.I.N.) पूर्ण स्वतंत्रता की प्रक्रिया तथा साथ-साथ सामाजिक क्रांति को प्रोत्साहित किया। लेकिन 1945-47 के दौरान जनता सांप्रदायिक विध्वंस तथा विभाजन के तनावपूर्ण माहौल में जीने के लिए मजबूर कर दी गयी।

33.5.2 संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना युद्ध के समय अस्तित्व में आये फासीवाद विरोधी गठबंधन के दौरान हुई। अगस्त, 1941 में रूज़वेल्ट और चर्चिल ने अटलान्टिक घोषणा पत्र तैयार किया

जिसमें युद्धोपरांत "अंतर्राष्ट्रीय पुनर्संगठन तथा आम सुरक्षा के लिये विस्तृत और स्थायी व्यवस्था" की स्थापना के सिद्धांतों का उल्लेख किया गया। इन सिद्धांतों के आधार पर जनवरी, 1942 को धुरी-राष्ट्र विरोधी शक्तियों ने संयुक्त राष्ट्र संघ की घोषणा पर हस्ताक्षर किये। सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक प्रजातंत्र और राष्ट्रीय प्रभुसत्ता के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों को अलग-अलग घोषणाओं में विस्तार दिया गया, जो कि बाद में संयुक्त राष्ट्रों के विभिन्न अंगों में समाहित हो गये। जून, 1945 में सैन फ्रांसिसको में अंतिम घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये गये। युद्ध के दौरान का ब्रिटेन, अमरीका, सोवियत संघ, चीन तथा अन्य पचास राष्ट्रों का गठबंधन विश्व की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए कई अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों को अस्तित्व में लाया। 1943 में संयुक्त राष्ट्र राहत और पुनर्वास प्रशासन की स्थापना हुई। 1944 में अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund) तथा पुनर्निमाण और विकास हेतु अंतर्राष्ट्रीय बैंक (International Bank for Reconstruction and Development) की स्थापना वित्तीय तथा मुद्रा समस्याओं से निपटने के लिए की गयी। संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) सामाजिक और सांस्कृतिक सहयोग की देख-रेख के उद्देश्य से स्थापित किया गया था। संगठन की प्रस्तावना में उचित रूप में घोषणा की गयी थी कि अंतर्राष्ट्रीय शांति की स्थापना "मानव जाति के बौद्धिक और नैतिक एकजुटता के आधार पर" की जानी चाहिए। पौष्टिकता का स्तर बढ़ाने, खाद्य पदार्थों के उत्पादन और वितरण की पद्धति में सुधार लाने तथा विश्व अर्थव्यवस्था के विस्तार में योगदान करने के उद्देश्य से 1945 में खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agricultural Organisation) की स्थापना की गयी। संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता जो कि 1945 में 51 थी, धीरे-धीरे बढ़कर 1963 में 123 हो गयी, लेकिन शीतयुद्ध ने इसकी प्रभावपूर्ण क्रियाशीलता पर गहरा प्रभाव डाला।

33.5.3 यूरोप पर आर्थिक प्रभाव

युद्ध के बाद अव्यवस्थित यूरोप में ग़रीबी के दर्शन होने लगे तथा लाखों शरणार्थियों और युद्ध बंदियों की आवासीय और खाने की समस्या सामने आयी। यूरोप की अर्थव्यवस्था का विघटन उद्योगों के नाश, क्षतिग्रस्त परिवहन व्यवस्था, मुद्रा स्फीति, अस्थिर मुद्रा स्तर तथा राजनीतिक अस्थिरता के कारण हुआ। 1947 के मध्य तक पहुंचते-पहुंचते अल्प उत्पादन और अल्प पूंजी निवेश की समस्या पूरे यूरोप में फैल गयी। ब्रिटेन के आर्थिक रूप से कमज़ोर हो जाने से पश्चिमी विश्व का नेतृत्व अमरीका के हाथ में पहुंच गया।

जून, 1947 से पश्चिमी यूरोप के पुनरुत्थान के लिए अमरीकी सहायता ही मुख्य आधार बनी। युद्ध पूर्व वाली यूरोपीय स्थिति बनाने के कार्यक्रम (मार्शल प्लान) के तहत 1948-49 के दौरान अमरीका ने पश्चिमी यूरोप को प्रतिवर्ष चालीस ख़रब (चार बिलियन) डालर की सहायता की। 1950 तक पहुंचते-पहुंचते माल के उत्पादन और सेवाओं में बढ़ोतरी होने के कारण पश्चिमी यूरोप की स्थिति में तेज़ी से सुधार आया। लेकिन शेष यूरोप में सुधार की गति धीमी बनी रही क्योंकि शीत युद्ध के कारण पूर्वी यूरोपीय देशों को अमरीकी सहायता से वंचित रखा गया।

33.5.4 शीत युद्ध की शुरुआत : नया विचारधारात्मक संघर्ष

1947 में पहली बार अमरीकी राजनेता बर्नार्ड एम० बुच द्वारा "शीत युद्ध" का प्रयोग किया गया लेकिन इसके चिन्ह 1942-43 की घटनाओं में ढूंढ़े जा सकते हैं। रूस पर जर्मनी के आक्रमण के आघात को हल्का करने के लिए यूरोप में दूसरा मोर्चा खोलने में जानबूझकर देरी की गयी जिसके कारण रूस और पश्चिम के बीच गठबंधन होने में अनिश्चितता बनी रही। सितम्बर, 1943 में इटली के साथ युद्ध विराम वार्तालाप में रूस को शामिल न करने के कारण रूस की शंका को और बल मिला। परिणामस्वरूप रूस ने 1945 में बुलगारिया, रूमानिया और हंगरी के प्रशासन में पश्चिम को शामिल नहीं किया। यही स्थिति पोलैंड में भी रही। शीतयुद्ध में जर्मनी का प्रश्न केन्द्रीय मुद्दा बन गया।

सोवियत विस्तार तथा कम्युनिस्ट विचारों और आंदोलनों के प्रभाव को अन्य क्षेत्रों में न फैलने देने के उद्देश्य से जो "ट्रूमैन सिद्धांत" बना था दरअसल उसने ही "शीत युद्ध" की नींव रखी। यहां तक कि जून, 1947 से यूरोपीय पुनर्निमाण के लिए अमरीकी आर्थिक सहायता

कम्युनिज़्म के विरुद्ध विचाराधारात्मक युद्ध का अमरीकी हथियार बन चुकी थी। इसके परिणामस्वरूप कम्युनिस्ट पक्ष और पश्चिमी/अमरीकी पक्ष के बीच विभाजन की लौह दीवार खड़ी हो गई। यह विचारधारात्मक विभाजन विरोधी सैन्य पक्षों में सैन्य गठजोड़, जैसे "नाटो" "सीटो" इत्यादि के रूप में विश्व विभाजन में बदल गया। तब से सम्पूर्ण विश्व तीसरे विश्व युद्ध के कगार पर खड़ा है और आणविक हथियारों का भंडार खड़ा करने में मानवता के अस्तित्व को ही चुनौती दी जा रही है।

बोध प्रश्न 2

1 निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें और सही (√) अथवा ग़लत (×) का निशान लगायें।

i) अभिग्रहित क्षेत्रों में जन प्रतिरोध आंदोलनों ने धुरी शक्तियों की पराजय में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। ☐

ii) हिटलर की युद्ध नीति के विरुद्ध जर्मनी में कोई जन आंदोलन नहीं हुआ। ☐

iii) द्वितीय विश्व युद्ध के बाद साम्राज्यवादी शोषण का अंत हो गया। ☐

iv) "शीत युद्ध" का आधार सोवियत विस्तार तथा कम्युनिस्ट विचारों के प्रभाव को अन्य क्षेत्रों में फैलने से रोकना था। ☐

2 भारत की राजनीति पर द्वितीय विश्व युद्ध के प्रभाव का संक्षिप्त विवरण दें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

3 संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना क्यों की गयी इसके तीन महत्वपूर्ण अंगों के नाम बताएं।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

33.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि प्रथम विश्व युद्ध के बाद का शांति समझौता स्थिर राजनीतिक व्यवस्था प्रदान न कर सका। इस समझौते के बाद विश्व के एक बड़े हिस्से, विशेषकर छोटे

राष्ट्रों में असंतोष बना रहा। इसके अतिरिक्त 1929-33 के आर्थिक संकट ने राजनीतिक संकट को और गहरा बना दिया। जर्मनी में नात्सीवाद का उदय, इटली में फासीवाद तथा जापान में सैन्यवाद का उदय अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के लिए निर्णायक सिद्ध हुए और द्वितीय विश्व युद्ध में उन्होंने प्रमुख भूमिका निभायी। मंचूरिया पर जापान के आक्रमण, अबीसीनिया पर इटली के आक्रमण तथा 1936-39 में स्पेन के गृह युद्ध ने व्यापक संघर्ष की स्थितियां तैयार कर दीं। ब्रिटेन और फ्रांस की तुष्टीकरण की नीति नात्सी और फासीवादी शक्तियों के हमले के लिए काफ़ी हद तक ज़िम्मेदार रही।

अमरीका और सोवियत संघ का युद्ध में प्रवेश तथा अभिग्रहित क्षेत्रों में जन प्रतिरोध आंदोलनों ने धुरी राष्ट्रों को रक्षात्मक स्थिति में ढकेल दिया। अंततः धुरी राष्ट्रों को युद्ध में भयावह पराजय का मुंह देखना पड़ा।

उपनिवेशवाद के स्थान पर नवउपनिवेशवाद का उदभव, विभिन्न स्वतंत्र राज्यों की स्थापना, संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना तथा शीत युद्ध की शुरुआत जिसने नये तनावों को जन्म दिया, युद्ध के ये कुछ महत्वपूर्ण परिणाम हैं।

33.7 शब्दावली

ऑटार्की : किसी राज्य का स्वावलम्बी होना, विशेषकर अपनी अर्थव्यवस्था में।
तीसरी दुनिया : वे देश जो कि निर्धन हैं शक्तिशाली नहीं है और विकासशील समझे जाते हैं जैसे एशिया और अफ्रीका के देश तीसरी दुनिया के नाम से पुकारे जाते हैं।
ट्रूमैन सिद्धांत : अमरीकी राष्ट्रपति ट्रूमैन की घोषणा जिसने सभी राष्ट्रों को अपनी स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने के लिए सैनिक और आर्थिक सहायता देने का वचन दिया। इसका उद्देश्य सोवियत विस्तार को रोकना तथा कम्युनिस्ट विचारों और आंदोलनों के प्रभावों को अन्य क्षेत्रों में न फैलने देना था।
नाटो : नार्थ अटलांटिक ट्रीटी आर्गेनाइज़ेशन (उत्तर प्रशांत संधि संगठन) एक ऐसी संस्था जिसमें अमरीका, कनाडा, ब्रिटेन और अन्य पश्चिम यूरोपीय देश शामिल हैं। इनके बीच समझौता है कि वे इनमें से किसी देश पर आक्रमण की परिस्थिति में एक दूसरे की सहायता करेंगे तथा इनका ध्येय कम्युनिज़्म के विकास को रोकना है।
नव उपनिवेशवाद : किसी स्वतंत्र देश पर किसी अन्य देश द्वारा आर्थिक नियंत्रण अथवा राजनीतिक प्रभाव जो उस देश के व्यापार अथवा वित्तीय संस्थानों पर नियंत्रण के द्वारा किया जाता है। इसे नव उपनिवेशवाद की संज्ञा दी गयी है।
सीटो : साउथ ईस्ट एशियन ट्रीटी आर्गेनाइज़ेशन (दक्षिण पूर्व एशियाई संधि संगठन) जो कि कुछ दक्षिण पूर्व एशियाई स्वतंत्र देशों के बीच सैन्य गठबंधन है। कम्युनिज्म के विरोध में यह संगठन अमरीका की पहल पर अस्तित्व में आया।
वाइमर सरकार : प्रथम विश्व युद्ध के बाद जर्मनी में स्थापित सरकार जो हिटलर के सत्ता में आने तक कायम रही।

33.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1 आपके उत्तर में जर्मनी के क्षेत्रीय नुकसान तथा जर्मनी में 1919 के स[illegible]ते के विरुद्ध जन असंतोष का उल्लेख किया जाना चाहिए। देखें उपभाग 33.2.1
2 जापान में अतिराष्ट्रवाद और सैन्यवाद का उदय, मंचूरिया पर जापानी हमला जिसके कारण चीन जापान युद्ध का सूत्रपात हुआ, आदि देखें उपभाग 33.3.1
3 i) √ ii) √ iii) × iv) √

बोध प्रश्न 2

1 i) √ ii) × iii) × iv) √

2 कांग्रेस द्वारा फासीवादी युद्ध की भर्तस्ना, अंग्रेज़ों द्वारा कांग्रेस की स्वराज की मांग को ठुकराया जाना, कांग्रेस द्वारा भारत छोड़ो आंदोलन की शुरुआत करना, आदि देखें उपभाग 33.5.1.

3 आम सुरक्षा की स्थायी व्यवस्था तैयार करना, यूनेस्को, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष आदि। देखें उपभाग 33.5.2

इस खंड के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकें

एस० सी० बनर्जी : **कॉंस्टीट्यूशनल हिस्ट्री ऑफ इंडिया**, भाग-दो (दिल्ली, 1972)
मार्विराइट रोज डेव : **फोर फी हेड फ्यूचर : द कान्फिलिक्ट ओवर कांग्रेस** (Margnirite Rose Dowe) मिनिस्ट्रीज (चाणक्य, दिल्ली, 1987)
कपिल कुमार : **कांग्रेस एंड कलाजेज** (मनोहर, नई दिल्ली, 1988)
जे० नेहरू : **एन आटोबायोग्राफी** (बम्बई, 1962)
डी० एन० पाणिग्रही (संपादित) : **इकॉनॉमी सोसायटी एंड पालिटिक्स इन माडर्न इंडिया** (विकास, नई दिल्ली, 1985)
सुमित सरकार : **माडर्न इंडिया**, (मैकमिलन, नई दिल्ली, 1983)
रानी धवन शंकरदास : **द फर्स्ट कांग्रेस राज,** (मैकमिलन, नई दिल्ली, 1982)
पट्टाभि सीतारमैया : **हिस्ट्री ऑफ इंडियन नेशनल कांग्रेस,** भाग दो,
(पदमा, बम्बई, 1947)
(उपर्युक्त पुस्तकें केवल अंग्रेजी भाषा में ही उपलब्ध हैं)।
आर० पी० दत्त – आज का भारत
अयोध्या सिंह – भारत का मुक्ति संग्राम
तारा चंद – भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास खंड 3 और 4
आर० एल० शुक्ला – आधुनिक भारत